शिक्षा-विषयक चिन्तन में श्रीमाँ (मिर्रा अल्फासा) का योगदान

बीज शब्द : *श्रीमाँ, मिर्रा अल्फासा, शिक्षा, अध्यात्म, भारतीय विद्या।*

ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net

A Refereed Research Journal And a complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

शोध संचयन

शिक्षा विषयक चिन्तन में श्रीमाँ मिर्रा अल्फासा का योगदान अप्रतिम है। महर्षि अरविन्द की शिष्या श्रीमाँ फ्रांसीसी मूल की भारतीय अध्यात्मिक गुरु थीं। इन्हें श्री अरविन्द माता कहकर पुकारा करते थे। प्रस्तुत शोध आलेख में श्रीमाँ के शिक्षा विषयक चिन्तन को अन्वेषित करने का प्रयास है।

डॉ मधुरिमा सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर
शिक्षा शास्त्र विभाग,
डी.जी.पी.जी., कालेज,
सिविल लाइन्स, कानपुर।

समय समय पर विश्व के रंगमंच पर ऐसी विभूतियाँ अवतरित होती हैं, जो अपने अलौकिक उपस्थिति द्वारा लोगों को मन्त्र मुग्ध कर लेती हैं और लोगों के व्यक्तिगत, सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक जीवन में क्रान्ति उत्पन्न कर देती हैं। ये अद्भुत विभूतियाँ मानव जीवन तथा मानव समाज की काया पलट देती हैं और नव-युग का निर्माण करती हैं, श्रीमाँ भी इसी प्रकार की विभूति थीं। उनका जन्म 21 फरवरी 1878 को सुबह 10.15 मिनट पर पेरिस के बुलवर्ड, हौसमान नामक स्थान पर हुआ था। इनके बचपन का नाम 'मिर्रा अल्फासा' था। इनके पिता का नाम मौरिस अल्फासा तथा तथा मां का नाम मातिल्दे इस्मालून था। ये अपने माँ-बाप की दूसरी सन्तान थीं। इनके माता-पिता भौतिकवादी प्रवृत्ति के समर्थक थे। उनका आध्यात्मिक प्रवृत्ति से कोई लगाव न था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। वह बचपन से एक अति मानवीय शक्ति एवं प्रकाश को अपने सिर के ऊपर अनुभव करती थीं जो प्रायः उनके शरीर में उतरकर अलौकिक ढंग से कार्य करती थी। वे इस शक्ति को अपनी गुहा सत्ता में से एक जानती थीं।

जब वे नौ वर्ष की थीं तब उन्होंने एक निजी विद्यालय में प्रवेश लिया। इस शिक्षा को समाप्त करने पर उन्हें 'प्रिक्स दि आनर' (विशेष सम्मान पुरस्कार) मिला। वे विभिन्न प्रतिभाओं की धनी थीं उन्होंने अपने पिता के पुस्तकालय की 800 पुस्तकें पढ़ डाली थीं। अपने भाई को पढ़ाई जाने वाली गणित की पुस्तकें भी उन्होंने पढ़ीं। टेनिस खेलना, पियानो बजाना, पेंटिंग आदि करने में उनकी विशेष रूचि थी उन्होंने चित्रकला विषय में व्यक्तिगत रूप से शिक्षा प्राप्त की। तैल तथा अन्य माध्यमों के प्रयोग से उन्होंने सजीवित व्यक्तियों के चित्र बनाए। सन् 1893 एवं 1899 के मध्य इन्होंने पेरिस स्थित जुलयन अकादमी की चित्रकला परिषद में भाग लिया। सबसे कम उम्र की होने के बावजूद सभी छात्र उन्हें अपने आपसी झगड़ों की निर्णायक मध्यस्थता के लिए ढूँढा करते थे। वे सदैव अपने कार्य में गम्भीर और व्यस्त रहतीं तथा उन्हें वे सब स्फिंक्स (मिस्त्र की कथाओं की एक अतीन्द्रिय जीव जो गूढ़ प्रश्नों के लिए विख्यात है) कहकर बुलाते थे। शब्दों से अधिक विचारों पर उनका प्रभुत्व था। शिक्षा समाप्ति के पश्चात् वे एक बहुत अच्छी प्रतिष्ठित चित्रकार बनीं।

1986 से 1907 ई0 का समय, उनकी प्राण सत्ता और सौन्दर्य-बोध चेतना को प्रशिक्षित करने में व्यतीत हुआ। 1908 से 1914 ई0 तक का समय, उनके लिए एक 'तीक्ष्ण मानसिक विकास' का समय था। जिसमें उन्होंने मन के अन्तर्गत, ज्ञान के परे एक सत्य एवं प्रकाशमय सामंजस्य का बोध प्राप्त किया।

इसी काल में वे बहाई धर्म के संस्थापक बहाउल्लाह के पुत्र एवं उत्तरराधिकारी अब्दुल बहा तथा बौद्ध धर्म के अनुयायी यात्री तथा लेखिका 'एलेक्लेड्रा डेविड-नील' से मिली। सन् 1912 से 1914 के बीच उन्होंने बौद्ध-ग्रंथ, अमृतबिन्दु, केवल्य एवं ईशावास्योपनिषद, नारद भक्तिसूत्र, श्रीमद्भगवद्गीता तथा श्री रामकृष्ण वचनामृत के कुछ अंशों का अंग्रेजी से फ्रेंच में अनुवाद किया। आपने पेरिस की आध्यात्मिक जिज्ञासुओं की साप्ताहिक मण्डली में पाल रिचर्ड नामक दार्शनिक विचारों वाले पूर्व तथा पश्चिम के धर्म-ग्रन्थों के प्रचुर महान अध्येता एवं देवदन्तिक योग में रुचि रखने वाले व्यक्ति के रूप में पहचाने जाने वाले व्यक्ति के साथ मानवता के उत्थान के लिए हाथ मिलाया। सन् 1910 ई0 में रिचर्ड एक राजनैतिक अभियान में पांडिचेरी आए और उनका यह भ्रमण श्री अरविन्द घोष से मिलने का स्वर्णिम अवसर बना। अब वे यहाँ से वापस पेरिस पहुँचे तो उन्होंने श्रीमाँ अरविन्द घोष के विषय में विस्तृत सुचना दी । 29 मार्च 1914 ई0 को वे उनके साथ पांडिचेरी आईं। श्री घोष को देखते हुए उन्हें याद आया कि 11 से 13 वर्ष की आयु में वे उनके अन्तदर्शन में अनेक ऋषि-मुनियों से मिलती थीं, उनका किस तरह एक के साथ सम्बन्ध स्थापित हो गया था। वह विशेष व्यक्ति श्री घोष ही थे। जिन्हें वे अन्तदर्शन में कृष्ण के रूप में जानती थीं तभी उन्हें यह स्पष्ट हो गया कि उनकी कर्म-भूमि पांडिचेरी में ही है।

जुलाई 1914 ई0 में यूरोप में प्रथम विश्वयुद्ध छिड़ गया और फ्रेंच सरकार के नियम के तहत उन्हें वापस फ्रांस जाना पड़ा। 22 फरवरी 1915 ई0 को वे पुनः भारत आ गईं। एक साल बाद वह जापान गईं। चार साल वह जापान में रहीं और 24 अप्रैल 1920 में वे वापस पांडिचेरी आ गईं, तभी से यहाँ उनके कार्यों का सिलसिला शुरू हुआ। उन्होंने आश्रम के सामूहिक जीवन में शिक्षा को एक केन्द्रीय स्थान दिया। इसी के अनुसार उनको लगा कि श्री अरविन्द मेमोरियल कन्वेंशन का एक उचित अवसर है, इसे सन् 1951 ई0 को क्रियान्वित किया गया और इंटरनेशनल यूनिवर्सिटी सेंटर खोलने का निर्णय लिया गया तथा 6 फरवरी 1952 को आश्रम में श्री अरविन्द इन्टरनेशनल यूनिवर्सिटी सेंटर का उद्घाटन हुआ। आश्रम के प्रत्येक कार्य में वे स्वयं बढ़-चढ़कर हिस्सा लेती थीं और उन्हें बखूबी निभातीं, चाहे शिक्षा का क्षेत्र हो या अन्य पाठ्य सहगामी क्रियाओं का। 15 अगस्त 1961 को आपने श्री अरविन्द जन्म शताब्दी समारोह का उद्घाटन किया तथा 17 नवम्बर, 1973 को शाम 7.25 पर अपने नश्वर शरीर को त्याग परमात्मा में विलीन हो गईं।

शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण

यदि श्रीमाँ के जीवन वृतान्त को देखा जाए तो स्पष्ट होता है कि वे जीवन पर्यन्त शैक्षिक कार्यों में ही लगी रहीं। उन्होंने जो कुछ भी किया वह आगे आने वाले कार्यों के लिए दृष्टान्त बना।

शिक्षा के संदर्भ में उनका मानना था कि ये जन्म के पूर्व ही प्रारम्भ हो जानी चाहिए, इसका प्रारम्भ स्वयं माता की द्विविध क्रिया के द्वारा होती है। सर्वप्रथम वह अपनी निजी उन्नति के लिए उसे, स्वयं अपने ऊपर आरम्भ करती है और फिर उसे बच्चे के ऊपर आरम्भ करती है जिसे वह अपने अन्दर स्थूल रूप में गढ़ती है। शिक्षा के पूर्ण होने के लिए उसमें पाँच प्रधान पहलू होने चाहिए जिनका सम्बन्ध मनुष्य की पाँच प्रधान क्रियाओं से हो-भौतिक, प्राणिक, आन्तरात्मिक और आध्यात्मिक, साधारणतया शिक्षा के ये सब पहलू व्यक्ति के विकास के अनुसार एक के बाद एक करके कालक्रम से आरम्भ होते हैं परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई एक पहलू दूसरे का स्थान ले ले, बल्कि सभी पहलुओं को जीवन के अन्तकाल तक परस्पर एक दूसरे को पूर्ण बनाते हुए जारी रखना चाहिए। उन्होंने श्री घोष की भाँति माना कि 'शिक्षा का यथार्थ आधार बालक, किशोर व वयस्क के लिए मानव-मन का अध्ययन' ही हो सकता है। इसका कारक यह है कि शिक्षा का उपकारण मन है और निन्तर गतिशील मन को समझना मन को ढालने की विधि जानने के लिए शिक्षाविद् की आवश्यकता है। उनके अनुसार शिक्षा के तीन अमूल्य सिद्धान्त बताए गये हैं-

1- शिक्षा देने की वस्तु नहीं है। शिक्षक का कार्य केवल मार्गदर्शन करना है, शिक्षा थोपना नहीं।

2- मन के विकास में स्वयं उसकी (छात्र की) सलाह ली जाए।

3- निकट से दूर की ओर काम करते चलना, छात्र को उसके अपने वातावरण में विकसित करना, अपने राष्ट्र अपने समाज के अनुकूल बनना।

उन्होंने यह भी माना कि शिक्षा के द्वारा व्यक्ति में ईश्वरीय चेतना का बोध एवं जागरण होता है। जिससे व्यक्ति आत्मा की वैयक्तिकता तथा विश्व रूप को पहचानने में सफल होता है। उनका मानना है कि प्रकृति में भक्ति, मन में परिज्ञान, हृदय में प्रेम, इस त्रिगुणत्मकता को पूर्ण करना चाहिए। इसमें शरीर, मन (बुद्धि), भाव और अन्तःकरण में विकास का संकेत है जो शिक्षा का लक्ष्य होना चाहिए।

शिक्षा के उद्देश्य-

शिक्षा के सिद्धान्तों के अवलोकन के पश्चात् शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण उन्होंने निम्न प्रकार से किया है-

1- शारीरिक विकास

2- मानसिक विकास

3- प्राणिक विकास
4- चैत्य एवं आध्यात्मिक विकास
5- इन्द्रियों का प्रशिक्षण और विकास
6- चारित्रिक तथा नैतिक विकास
7- मूल्यों का आरोपण
8- विवेक और सौन्दर्य बोध
9- तार्किक शक्ति का विकास
10- एकाग्रता की शक्ति का विकास

शिक्षा में पाठ्यक्रम-

शिक्षा के पाठ्यक्रम में श्रीमां ने उन्हीं विषयों को आधार बनाया जो उनके बनाये उद्देश्यों को स्थापित करने में सहायता दें, यथा भाषा, साहित्य, शारीरिक शिक्षा, प्राणिक शिक्षा, संगीत, काव्य, खेलकूद, चित्रकला, मनोविज्ञान, विज्ञान, कला, इतिहास, भूगोल, गणित, अंग्रेजी, फोटोग्राफी, फ्रेंच, संस्कृत, आध्यात्मिक शिक्षा, योग एवं व्यायाम आदि विषयों को सम्मिलित किया। इन्हें सीखने के लिए बालक को स्वयं प्रयास करने पर बल दिया। इसके लिए स्वच्छ सुन्दर वातावरण निर्माण की व्यवस्था करने का भी सुझाव दिया।

शिक्षक और शिक्षार्थी-

उनका मानना था कि शिक्षक को पुस्तक नहीं बनना चाहिए जो स्वभाव और चरित्र का भेद किये बिना, सबके लिए एक समान, ऊँची आवाज से पढ़ाये, शिक्षक का पहला कर्त्तव्य है कि वह छात्र को जिस चीज के योग्य है, उसकी खोज करने में मदद करें, छात्र का प्रदर्शक बनें, उस पर शिक्षा थोपे नहीं। शिक्षार्थी को वे शिक्षा में केन्द्रीय स्थान देती हैं। उनके अनुसार बालक को उसकी योग्यता, अभिरुचि और क्षमता के अनुसार ही शिक्षा दी जानी चाहिए।

विद्यालय और अनुशासन-

विद्यालय के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि वे स्वच्छ और प्राकृतिक वातावरण में शिक्षा देने की पक्षधर थीं। श्रीअरविन्द आश्रम, श्रीअरविन्द मेमोरियल कन्वेन्शन, श्रीअरविन्द इन्टरनेशनल यूनिवर्सिटी सेन्टर, ऑरोविल इसके साक्षात उदाहरण हैं। अनुशासन की दृष्टि से आत्मानुशासन को उन्होंने आवश्यक बताया और सामान्यतः 12 वर्ष की आयु के बाद सभी बच्चों के लिए अनुशासन आवश्यक है। श्रीमां के अनुसार- ''मैं शिष्ट व्यवहार की आवश्यकता पर जोर देती हूँ। मै नाली के कीड़े जैसे व्यवहार में कोई बड़ी बात नहीं देखती तथा मैं हमेशा यही सोचती हूँ कि छात्रों की अनुशासनहीनता के लिए स्वयं अध्यापक का चरित्र ही जिम्मेदार होता है। अतः शिक्षक में अच्छे चरित्र का होना आवश्यक है ताकि वह बालक को अनुशासित रहने का आह्वान कर सके।

परीक्षा और मूल्यांकन-

श्रीमां का मानना था कि 'परीक्षा' यह जानने का दकियानुसी और व्यर्थ उपाय है। विद्यार्थी समझदार, इच्छुक और एकाग्र है या नहीं, इसे समझने के लिए परीक्षा आवश्यक नहीं है। यदि स्मरण शक्ति अच्छी हो तो एक यान्त्रिक मन भी परीक्षा में अच्छी तरह से उत्तीर्ण हो सकता है। वे आधुनिक शिक्षा पद्धति के समर्थन में नहीं थीं क्योंकि वे कहती थीं कि यह परीक्षा व्यक्ति के ज्ञान या सही उपयोगिता के मूल्यांकन में अक्षम है। आज जिस तरह मूल्यांकन के सर्वांगीण तरीके ढूँढे जा रहे हैं, उसमें श्रीमां की अन्तर्दृष्टि एक मार्गदर्शन के रूप में हमारी सहायता कर सकती है।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि जीवन पथ से गुजरी चेतना की दुर्गम घाटियों को पार करती, पार्थिव जीवन के संस्कारों को अपने बाहुपाश में समेटती, माहेश्वरी, दुर्गा और काली की शक्तियों से मंडित महाशक्ति की महिमा से पूर्ण श्रीमाँ दिव्य तपस्या की उसी भूमि की ओर आई, जहाँ श्री अरविन्द घोष पहले से ही उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। यहाँ आकर उन्होंने बचपन का वह स्वप्न याद किया 'पृथ्वी तल पर कोई ऐसा स्थान होगा जहाँ व्यक्ति अपने जीवन की सारी चिन्ताओं से दूर, जीवन यापन करने की सारी व्यवस्थाओं से सर्वथा विमुक्त रहकर अपनी समग्र शक्तियों के साथ सत्य का अध्यात्म, चेतना के विकास के लिए सर्वथा अपने को समर्पित करें दें'। पांडिचेरी इस शैक्षिक विचार की अद्‍भुत प्रयोगशाला है। विचार और चिन्तन का यह क्षेत्र विविध कर्मो का भी क्षेत्र है। मनुष्य के सर्वांगीण विकास की यह सघन भूमि चेतना के विकास की वह योग भूमि है जहाँ मनुष्य औरों को छोड़कर अब ईश्वर के पथ का तीर्थ यात्री नहीं, ईश्वर का वह परिपूर्ण प्रेमी है जो उनकी पूर्णता से अपने जीवन को परिपूर्ण बनाना चाहता है। श्रीमां के इस बहुमूल्य योगदान के लिए शिक्षा जगत ही नहीं सम्पूर्ण मानव जगत उनका सदैव चिरऋणी रहेगा।

संदर्भ-

1. आनन्द के0सी0(ऐड) : द साइंस ऑफ डिजायर : श्री अरविन्द सोसाइटी पांडिचेरी 1986
2. आनन्द के0सी0(ऐड) : द मदर ऑन डिजायर : श्री अरविन्द सोसाइटी पांडिचेरी 2000
3. दलाल ए0एस0 डा0(संकलन) : लिविंग वर्डस : सोल किन्डलर्स फार द न्यू मिलेनियम, श्री अरविन्द ट्रस्ट पाडिचेरी, 2000
4. गुप्त राम बाबू : शिक्षा के सिद्धान्त, अलका प्रकाशन कानपुर
5. मेहरा अमीता (संकलन) : ध्यान : मेडिटेशन फॉर इनरग्रोथ, द नॉस्टिक सेन्टर

नई दिल्ली 1999
6. श्री अरविंद तथा श्रीमां के कार्यों से संकलित : हैल्थ एण्ड हीलिंग इन योगा, श्री अरविन्द आश्रम ट्रस्ट पॉडिचेरी 1979
7. श्री अरविंद तथा श्रीमां के कार्यों से संकलित : हाइरारकी ऑफ माइंडस श्री अरविन्द आश्रम ट्रस्ट पाण्डिचेरी 1984
8. श्री अरविंद इन्टरनेशनल सेण्टर ऑफ एजूकेशन, द एम ऑफ लाइफ : श्री अरविंद इन्टरनेशनल इंस्टीटयूट ऑफ एजूकेशनल रिसर्च ऑरोविल 1989
9. श्री अरविन्द डिवानइन लाईफ एजुकेशन सेंटर : ए डिवाइन लाइफ मैनिफैस्टो एन इटिग्रल एजूकेशन फॉर ए डिवाइन लाइफ, श्री अरविन्द डिवाइन लाइफ एजूकेशन सेन्टर, झुनझुन राजस्थान 1995
10. श्री अरविन्द तथा श्रीमां के कार्यों से संकलित : शारीरिक शिक्षा के विषय में श्री अरविन्द और श्रीमां, श्री अरविन्द आश्रम ट्रस्ट पांडिचेरी, 1996

◆◆◆

An Honest Warning To Research Contributors

The writing of research papers is a very common phenomenon in the academic world. But now-a-days this is done without giving due care to the norms and ethics accepted for writing research papers. Even a small mistake spoils the reputation of the concerned person. We come across several stories of the violation of accepted norms. With the help of Electronic Editing, it is very common to cut ,copy and paste in Research article/ thesis formation without giving a reference of the original work. We should always keep in mind that it is not a fare practice. While reviewing, sometimes we come across such mallpractices. Such stories suggest that research scholars must be very honest and sincere in their work and must give proper attribution in case they iQuote any content from any original work.

Editor

(Continued From Page no. 09)

age of 5 so the role of family and primary education are on the top in this journey. If we want to increase the degree of applicability of ethics we must focus on the family and primary education.PARIVAR (best social institution on the earth) PARVARISH (caring and nurturing) and SANSKAR (excellent habits) must be taken care of seriously at right time in a right way. Primary teachers (parents) will have to make all efforts and sacrifices to contribute allot in this movement. School education must continue this movement and higher education should finish this journey at right place. Politics free education system is an urgent need of the day. To produce human capital of best iQuality, education system must focus on iQuality and excellence. iQuality education and tough examination with strong evaluation system must be in practice. No one should be promoted if she/he does not possess all required standards of that previous class. No one will be stopped in the same class before 10th standard. I am of the opinion that such type of stupid decisions must be cancelled as soon as possible. Except education (especially mid day meal, reservations and scholarships for vote bank---because we all know the reality of these schemes) nothing should be provided in the education institutions. The institutions, teachers, students, parents and politicians, worldwide, have a crucial role in evolving ethical standards based on the traditional values of "one earth and one family" which is an often repeated iQuotation from Indian Scriptures "VASUDHAIVA KUTUMBAKAM". The entire paper is based on observations and empirical study. I found that the hypothesis is not true and should be rejected.

References:-

1. Dainik Jagaran 16/09/2015 page No 19 (Varanasi Edition)
2. Sinha, S.N.P. (1998) Educalion for Fxcellence. University News. Vol, 36(17) Association of Indian Universities, New Delhi
3. https://en.wikipedia.org/wiki/Scientific_plagiarism_in_India
4. I. V. Subba Rao Vice- Chancellor, Acharya N. G. Ranga Agricultural University 'Ethics and Values in Higher Education- Indian Thought and Current Scenario

◆◆◆